© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

वाल्मीकि रामायण में स्त्री: एक विमर्श

राजेश कुमार
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

रामायण महाकाव्य : संस्कृति वाङ्मय में यह प्रथम महाकाव्य है, इसलिए यह आदि काव्य कहलाया है। यह महाकाव्य आर्ष काव्य की श्रेणी में आता है। आर्ष काव्य से तात्पर्य ऋषि प्रणीत काव्य से है। इसमें महाकाव्य के वे सब लक्षण हैं जो कालिदास, भवभूति, भास आदि संस्कृत में परवर्ती कवियों की विकसित रचनाओं में प्राप्त होते हैं। इस आर्षकाव्य के परवर्ती कवियों के लिए श्रेष्ठ आधार शिला कहा गया है।[1]

इस काव्य में करुण रस प्रधान है, जिसे भवभूति के अनुसार–'एकोरसः करुण एवं निमित्त भेदात्' सबसे प्रमुख रस माना गया है। इसमें अलंकारों आदि का यथोचित प्रयोग हुआ है।[2] यह मानने में किंचित् भी संदेह नहीं है कि इसी आदि काव्य का विश्लेषण करके अलंकारिकों ने महाकाव्य का लक्षण प्राप्त किया।

महाकवि दण्डी का प्रसिद्ध लक्षण रामायण को ही आदर्श मानकर लिखा गया है–

अलंकृतं संक्षिप्तं रसभावानिरन्तरम।
सर्गेरनति, विस्तीर्णः श्राव्यवृत्तैः सुसन्धिमिः।।
सर्वत्र भिन्न वृत्तान्तैरूपेतं लोक रंजनम्।
काव्यं कल्पान्तर स्थायि जायेत सदलंकति।।

इस आदर्श महाकाव्य की रचना तब हुई थी, जब आर्यावर्त स्वाधीनता तथा सभ्यता के शिखर पर था इसलिए इसके पात्रों में विशेष रूप से स्त्री पात्रों में जो देश एवम् काल का प्रतिबिम्ब मिलता है उससे यह बात स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

बाल्मीकि रामायण द्वारा प्राचीन भारत की सहस्रों वर्ष की पूर्व संस्कृति का परिचय मिलता है। इसके द्वारा तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं आर्थिक जीवन को समझाने में सुविधा होती

है। इसकी संस्कृति एक जीवित संस्कृति है, जिसके द्वारा आज भी परिवार एवं समाज की कई समस्याओं का समाधान होता है। अतः इसे भारतीय आर्य संस्कृति की आधारशिला कहा जा सकता है।

रामकथा की प्राचीनता, व्यापकता एवं विविधता :

राम कथा से आज सभी परिचित है। इसका प्रचार प्रसार प्राचीन काल से ही भारत एवम् एशिया के अन्य कई देशों में, विविध रूपों में रहा है। इस कथा ने भारतीय जन जीवन को अत्यंत प्रभावित किया है। यह भारतीय संस्कृति का प्रमुख तत्व बन गया है। यह कथा प्राचीन काल से मौखिक अथवा लिखित रूप में चली आ रही है।

वैदिक साहित्य में :

वेद हमारे सबसे प्राचीन ग्रंथ है, उसमें 'दशरथ' नामक एक राजा का उल्लेख है।[3] राम का नाम भी एक राजा के रूप में आया है।[4] ब्राह्मण ग्रंथों में 'जनक' का कई बार उल्लेख है।[5] सीता शब्द भी वैदिक साहित्य में अनेकों बार आया है।[6] जो सम्भवतः कृषि की अधिष्ठाती देवी के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

महाभारत में :

महाभारत में राम कथा का वर्णन कई स्थलों पर हुआ है। उसमें यह कथा विभिन्न अवसरों पर दृष्टांत रूप में कहीं गई है। इससे ज्ञात होता है कि महाभारत के पूर्व ही रामकथा प्रचलित रही होगी।

रामायण के रचयिता वाल्मीकि :

आदि कवि वाल्मीकि द्वारा ही रामायण की रचना हुई है तो सर्वमान्य है। स्कन्द पुराण में सनतकुमार ने नारद से पूछा कि रामायण कथा का किसने वर्णन किया है?

'रामायणं केन प्रोक्तं सर्वधर्म फलप्रदम्'

इस पर नारद मुनि ने उत्तर दिया–

'ऋतु रामायणं विप्र यद् वालमीकि के मुखोद्गतम्'।[7]

वाल्मीकि के जीवनकाल की घटनाओं के विषय में निश्चित रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं है। वास्तव में प्राचीन भारत, मनीषियों को नाम कमाने की इच्छा ही नहीं थी। वह तो स्वान्तः सुखाय तथा सर्वजन हिताय अपनी रचनाएं करते थे।

रामायण में कन्या जन्म की वांछनीयता :

प्राचीन काल में पितृ प्रधान परिवार होने के करण कन्या का जन्म पुत्र की अपेक्षा अनादर की दृष्टि से देखा जाता था। ऋग्वेद में पुत्र जन्म के लिए कई स्थानों पर प्रार्थनाएं मिलती हैं।[8] ऐतरेय ब्राह्मण में कन्या को दुःखों का स्रोत एवं पुत्र को परिवार का रक्षक कहा गया है।[9] इसी ग्रंथ में कन्या को कष्ट एवं पुत्र को परमलोक की ज्योति कहा गया है।[10] पुत्र अपेक्षा कृत अधिक प्रिय रहा होगा तभी अथर्ववेद में गर्भस्थ कन्या का पुत्र में परिवर्तन कराने हेतु मंत्र एवं विधि–विधान दिये गये हैं।[11] इसी ग्रंथ में विवाह के बाद वधू के लिए इंद्र के दस पुत्रों की प्राप्ति का आर्शीवाद मांगा जाता था।[12] इसी प्रकार गर्भाधान संस्कार, पुंसवन एवं सीमन्नतोनयन संस्कार में पुत्र की कामना की जाती थी।[13] मनु के अनुसार भी पुत्री का जन्म पुत्र की अपेक्षा कम अभीष्ट था।[14] सौ पुत्री होने के बाद भी पुत्र प्राप्ति हेतु पुत्रेष्ठि यज्ञ किया जाता था।[15]

रामायण में भी पुत्र प्राप्ति हेतु यज्ञ, तप आदि किये जाते थे जिसके कई उदाहरण हैं। दशरथ ने पुत्र प्राप्ति हेतु पुत्रेष्टि यज्ञ किया था।[16] राजा सगर ने अपनी रानियों सहित पुत्र प्राप्ति हेतु हिमालय पर्वत पर तपस्या की थी।[17]

उपर्युक्त सभी उदाहरणों में पुत्र की ही कामना की गई है पुत्री की नहीं, अतः पुत्र ही अधिक अभीष्ट था।

संस्कार :

माता के प्रत्येक बार गर्भवती होने पर पुंसवन संस्कार होता था। इसमें जात कर्म संस्कार बच्चे के जन्म लेने के तुरंत बाद होता था। यह संस्कार पुत्र एवं कन्या दोनों का ही होता था, क्योंकि कन्या के लिए धर्मशास्त्रों में संस्कारों के अलग से विधान नहीं दिये गये हैं। धर्मशास्त्र कन्या को पुत्र के समान ही कहते हैं।

उपनयन संस्कार भी किया जाता रहा होगा क्योंकि तत्कालीन नारियां शिक्षित थीं। रामायण में कन्या के संस्कारों के विषय में स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता।

कन्या पुण्य का साधन :

कन्याएं माता–पिता के लिए पुण्य का साधन होती थीं। विवाह में कन्यादान करने से पुथ्वीदान का पुण्य मिलता है। इस दृष्टि से कन्या पुत्र से अधिक महत्वपूर्ण थी। रामायण भी कन्या दान के धार्मिक महत्त्व का समर्थन करता है कि पुत्री के लिए वर प्राप्त करना पिता का धार्मिक एवम् अनिवार्य कर्तव्य था।

संसार में ज्ञानी पुरुषों की दृष्टि में कन्या दान से बढ़कर दूसरा कोई दान नहीं है।

अतः कन्यादान एक धार्मिक कृत्य था जो कन्या के द्वारा ही मिलता था।

पालन–पोषण :

यद्यपि पुत्री के जन्म के समय उसका पुत्र जैसा स्वागत न होता रहा होगा, किन्तु यह क्षणिक था, बाद में पुत्री का पालन–पोषण पुत्र की तरह ही होता था। श्री उपाध्याय जी के अनुसार 'पुत्र और पुत्री एक साथ प्रेम पूर्वक पालित–पोषित होकर पुत्र अपने पिता के कर्तव्यों का उत्तराधिकारी होता था और कन्या माता के गौरव का।[18]

रामायण में भी कन्या को अपनी माता की तरह एवं पुत्र को पिता की तरह कहा गया है।

'रामायण काल में भी कन्या का स्नेह पूर्वक पालन पोषण किया जाता था। धर्मशास्त्रों में पुत्री को अत्यंत प्रिय वस्तु कहा गया है।

प्राचीन काल से ही संसार की सभी सभ्यताओं में विवाह एक आवश्यक संस्कार रहा है। वैदिक काल में विवाह संस्कार दृढ़मूल हो गया था और ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में वैवाहिक विधि को काव्यमयी अभिव्यक्ति प्राप्त हुई थी।[19] रामायण काल में भी विवाह को आवश्यक माना जाता था।

विवाह का प्रयोजन एवं महत्व :

विवाह का मुख्य प्रयोजन सन्तानोत्पत्ति माना गया है। सन्तान के द्वारा वंश वृद्धि होती है।[20] पुत्र द्वारा पितृ–ऋण से मुक्ति मिलती है। वह पितरों को नरक से उद्वार करता है ऐसी मान्यता थी। नारियों की सार्थकता 'रतिपुत्रफलदाराः' में निहित थी।

नववधू का पतिगृह में स्वाागत :

प्राचीन काल से ही भारत में नव वधू का बड़े प्रेम और उत्साह से ससुराल में स्वागत किया जाता था। वैदिक मंत्रों द्वारा ज्ञात होता है, कि पतिगृह में प्रवेश करने के तुरंत बाद ही नव वधू को, अपनी गुरुजनों द्वारा परिवार के सम्पूर्ण कार्यों के संचालन का उत्तरदायित्व सौंप दिया जाता था, इसलिए वह सम्पूर्ण परिवार की साम्राज्ञी घोषित कर दी जाती थी। सम्भवतः साम्राज्ञी का गौरवशाली पद केवल परिवार की ज्येष्ठ वधू को ही दिया जाता रहा होगा, जिसे परिवार के अन्य छोटे बड़े सदस्यों की सुख–सुविधा का ध्यान रखना पड़ता था।

वैदिक काल की तरह रामायण युग में भी नव वधू को पतिगृह में अपनी सासों द्वारा बड़े प्रेम से स्वागत किया जाता था, एवम् उसे आर्शीवाद व शुभकामनाएं दी जाती थीं। राजा कुश नाम की कन्याएं विवाहोपरांत जब अपने पति ब्रह्मदत्त के साथ ससुराल आईं, तब उनकी सास गन्धर्वी सोमदा ने उन्हें ह्रदय से लगाकर प्रेमपूर्वक यथोचित् अभिनंदन किया, एवम् उनके पिता की भी सराहना की। इसी प्रकार सीता, उर्मिला आदि दशरथ की पुत्र वधुओं का अयोध्या में कौशल्या, सुमित्रा व कैकेयी ने भवन के प्रवेश द्वार पर ही उनका बड़ा भव्य स्वागत किया, और मंगलाचार सहित उन्हें पतिगृह में प्रविष्ट कराया।[21]

नारी का दाम्पत्य जीवन :

पति–पत्नी वैवाहिक सूत्र में बंधकर दम्पत्ति की संज्ञा पाते थे। दम्पत्ति शब्द पति–पत्नी का घर में सम्मिलित स्वामित्व का द्योतक था[22] अतः पति पत्नी, धार्मिक, पारिवारिक एवं सामाजिक कार्य सम्मिलित होकर करते थे, वैदिक साहित्य के अनुसार दम्पत्ति को एक मन वाला होना चाहिए, एवं दम्पत्ति का एक मन से यज्ञ का सोम बनाना चाहिए। श्री काणे भी पति–पत्नी की एक रूपता तथा समस्त कर्मों में दोनों के सहयोग की आवश्यकता बताते हैं।[23] इसी प्रकार मनु कहते हैं कि जिस घर में पति पत्नी हमेशा एक दूसरे से संतुष्ट और प्रसन्न रहते हैं, उस घर का निश्चित रूप से कल्याण होता है।[24] वैवाहिक प्रतिज्ञा में पति–पत्नी आजीवन एक दूसरे के सुख–दुःख में धार्मिक एवं पारिवारिक कार्यों में एक दूसरे का साथ देने का वचन देते थे।[25] और आदर्श दम्पत्ति का पूर्णतः पालन भी करते थे। रामायण में भी इन वैवाहिक प्रतिज्ञाओं का उल्लेख है।[26]

रामायण काल में अधिकांश आदर्श दम्पत्तियों का ही उल्लेख हुआ है। दशरथ–कौशल्या का उहारण भी उल्लेखनीय है जिन्होंने धार्मिक पारिवारिक कार्यों को अंत तक सम्मिलित होकर किया।[27]

प्रेम में काम का महत्व :

यद्यपि प्रेम में काम महत्वपूर्ण होता है, किन्तु धर्म और अर्थ का बाधक बनकर नहीं, रामायण में इस प्रकार के काम को सराहा गया है।[28] यद्यपि रामायण में कई स्थलों में काम अन्य पुरुषार्थों से ऊपर हो गया है।[29] रावण का अन्तःपुर तो मानों काम का साक्षात् रूप हो गया था।[30] किन्तु जब अर्थ और धर्म का परित्याग कर केवल राम का अनुसरण किया जाता है, तो मनुष्य शीध्र ही दशरथ की तरह आपत्ति में पड़ जाता है।[31] अतः रामायण में धर्म युक्त काम को अधिक श्रेय दिया दिया गया है– 'धर्मरतिः'[32] अमर्यादित काम की रामायण युग में भर्त्सना की जाती थी।[33]

स्त्री का पत्नी के रूप में कर्तव्य :

पत्नी के लिए पति ही परमेश्वर होता है।[34] अतः उसको प्रसन्न रखना एवं सेवा करना ही पत्नी का सबसे प्रमुख कर्तव्य था, उत्तम गुणों से युक्त व्रत, उपवास आदि में लगी हुई स्त्री भी यदि पति सेवा नहीं करती तो उसे नरक की प्राप्ति होती है।[35] इसके विपरीत केवल पति सेवा से स्वर्ग प्राप्त होता है।

मातृपद की महत्ता :

विवाह के बाद पत्नी के जीवन का पूर्णतः विकास मतृत्व पद प्राप्त होने पर ही होता था। भारत में प्राचीन काल से ही माता को आदरणीय स्थान प्राप्त था। ऋग्वेद में माता के रूप में नारी के गौरव को पराकाष्ठा प्राप्त हुई है।[36]

रामायण काल में भी माता को प्रत्यक्ष देवता माना जाता था।[37] मनुष्य को देव ऋण और पितृ–ऋण आदि से मुक्त कराने के लिए ही नारी को सन्तान आवश्यक थी। रामायण में भी सन्तान की आवश्यकता पितरों को नरक से उद्धार करने के कारण एवम् वंश वृद्धि में सहायक होने से है।

रामायण काल में अभिजात वर्ग में पर्दा प्रथा का अस्तित्व था, किन्तु वह भी आधुनिक अर्थ में पर्दा नहीं था, क्योंकि स्त्रियां मुंह पर घूघट नहीं डालती थीं, केवल राक्षस जाति के राज्य परिवार की महिलायें घूंघट डालती थीं।

राज्य परिवार में प्रतिष्ठा हेतु परदा प्रथा थी, इसलिए राज्य परिवार की महिलाएं सामान्य जनों के समक्ष नहीं आती थी। सीता को राम के साथ वन में जाते हुए देखकर अयोध्यावासी कहने लगे कि जिन सीता को पहले आकाश में विचरने वाले प्राणी भी नहीं देख सकते थे, उन्हें आज राजमार्ग में बड़े सामान्य लोग भी देख रहे हैं।[38] रामायण कालीन शिष्टाचार बहुत श्रेष्ठ कहा जा सकता है। परिवार, समाज एवं आश्रमों में परस्पर शिष्टता पूर्ण व्यवहार का उल्लेख मिलता है। रामायण कालीन नारियों का जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण था। उनके अनुसार संसार में सभी प्राणियों पर आपत्तियां आती हैं, किन्तु अग्नि की भांति क्षण भर में चली जाती हैं।[39] रामायण काल में भी नारी को सभी प्राणियों के लिए अवध्य कहा गया है इसलिए भरत ने शत्रुघ्न को मंथरा का वध करने से रोका था। स्त्री वध करने वाले को राजा, बालक या वृद्ध का वध करने के बराबर पाप लगता था। रामायण काल में यद्यपि स्त्री–वध को पाप कहा गया है। किन्तु समाज विरोधी कार्य करने बाली दृष्टा स्त्रियों का वध क्षम्य कहा गया है। रामायण में नारी को पति के साथ एवं स्वतंत्र रूप से धार्मिक कृत्य करने का अधिकार था।

सीता की अनुपस्थिति के करण राम ने अपने अश्वमेघ यज्ञ के अवसर पर सीता की स्वर्ण–मूर्ति रख कर यज्ञ सम्पन्न किया। रामायण काल में उच्च कोटि के भवनों का निर्माण किया जाता था। रामायण में मुख्यतः अभिजात वर्ग की कथा है। इसमें तत्कालीन भक्तों का ही प्रमुखतः उल्लेख हुआ है। ये भवन प्रसाद, विमान या हर्म्य कहलाते थे। इनमें सात, आठ मंजिलें होती थीं। अपने ऊंचे शुभ्र शिखरों से ये बहुत ही सुन्दर दिखाई पड़ते थे।

राजाओं की पत्नियां प्रासाद के अन्तः पुर में बने विभिन्न भवनों में निवास करती थीं। कैकेयी, कौसलया एवं सीता, के अलग–अलग भवन थे।

वाल्मीकि रामायण में नारी जीवन की विभिन्न पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति पर प्रकाश पड़ता है। वह कन्या, पत्नी, माता, विधवा, दासी एवं गणिका आदि विभिन्न रूपों में दृष्टिगत होती है।

कन्या जन्म यद्यपि पुत्र की तरह वांछनीय न था, किन्तु उपेक्षित भी नहीं था। कन्या का पालन–पोषण स्नेह पूर्वक किया जाता था। उसकी उपयुक्त शिक्षा आदि पर आवश्यक ध्यान दिया जाता था, किन्तु उसके कौमार्य के रक्षण का उत्तरदायित्व पूर्णतः निभाया जाता था। समाज में कन्या की उपस्थिति

पवित्र एवं मंगलमय मानी जाती थी। विवाह के लिए कन्या पितृवशा थी। सती प्रथा का अस्तित्व नहीं था।

संदर्भ :

1. बाल कां0 4–26
   आश्चर्यमितमाख्यानं मुनिना संप्रकीर्तितम्।
   परं कवीनामाधारं समाप्तं च यथा क्रमम्
2. बाल0कां0 2–43
3. ऋग्वेद– 1–126–4
4. ऋग्वेद– 20–129–4
5. तैत्तरीय ब्रा0 3–10–90, श0प0ब्रा0 11–3–12, 4 तथा 11–4–3, 10 एवं 11–6–2–10
6. ऋग्वेद– 4–57 में सूत्र तथा तैत्तरीय ब्रा0 2–310 में
7. स्कन्दपुराण 2–25, 28
8. उपाध्याय भगवतशरण – बीमेन इन ऋग्वेद– पृ0 33
   (क0वे0 1–9–1–92–13 ।31–23 ।41–42–45)
9. ऐ0ब्रा0 8–31–1
10. ऐ0ब्रा0 7–18
    सखा ह जाया कृपणं दुहिता।
    ज्योतिर्हि पुत्र : परमे व्योमन्।
11. अथर्ववेद 6–11, 3–23 एवं 3–3–21
12. अथर्ववेद 3–2–23 एवं 23–6
13. क्र0के0 10–78 7–8
14. दास आर0एस0 वीमेन इन मनु एण्ड हिज सेवेन– कमेन्टटेटर्स– पृ0 44 (मनु0स्म0 3.57–58)

15. वा0 1–5

16. रामायण बालकाण्ड 8–2

चिन्तयानस्य तस्यैवं बुद्धिरासीन्महात्मनः।

सुतार्थं वाजि मे धेन किमर्थं न यजाम्यहम्।।2।।

17. वही 38.3–5

18. उपाध्याय भगवत शरण– 'वीमेन इन ऋग्वेद', पृ0 34

19. डॉ0 पाण्डे रा0ब0 : हिन्दू संस्कार, पृ0 195 (क्र0वे0 1085, अथर्ववेद 14–1, 2)

20. बालकाण्ड 8–1, 38–12 एवं अयोध्याकाण्ड 110–21

21. बालकाण्ड 77 10–11

कौशल्या च सुमित्रा च कैकेयी च सुमध्यमा।

वधू पतिग्रहे युक्ता याश्चान्था राजयोषितः।।10।।

ततः सीता महाभागाभूर्मिलां च यशस्विनीम्।

कुशध्वजसुते चोभे जगृहुर्नृप योषितः।।11।।

22. अल्तेकर ए0एस0– पोजीशन ऑफ वीमेन, पृ0 94

23. काणे पी0वी0– हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र वाल्यु–2, भाग–1, पृ0 575

24. मनु0स्म0– सन्तुष्टो भर्ययाभर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।

यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याण तत्रैव ध्रुवम्।।3–60।।

25. अल्तेकर ए0एस0– पोजीशन ऑफ वीमेन, पृ0 95

26. बाल0कां0 73–26–27। अयो0कां0 42–7–8, युद्ध 32–21

27. बाल0कां0 8–23–24, अयो0कां0 12–68–69, युद्ध 32–20–21

28. अयो0कां0 100–62

कश्चिदर्थे वा धर्ममर्थे धर्मेण वा पुनः, उभौवा प्रीती लोमेन कामेन न विवाधसे।।

29. अयो0कां0 53–9, किष्किं0कां0 1–68, सुं0 22–4–5, युद्ध 12–15

30. सु0 5—9, 17—16

31. अयो0 53—13, अर्थ धर्मौं परित्यज्य यः काममनुवर्तते।

स्वमापद्यते क्षिप्रं राजा दशरथो यथा।

32. अयो0कां0 75—55

33. अयो0कां0 63—30, 75—55, किष्किं0कां0 18—22, 55—3, उ0कां0 9—22—24, 86—15।